माननीय न्यायालय *एस.एस. निज्जर और एस.एस. सरोन, जे जे.*

दीन दयाल शर्मा – *याचिकाकर्ता*

बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य – *उत्तरदाता*

2004 की *सी. डब्ल्यू. पी. 2490*

12 मई, 2005

भारत का संविधान, 1950 – अनुच्छेद *14 और 226 –प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत* – उत्तरदाता *सैन्य सेवा* का वो *लाभ वापस ले* रहा है, जो उन्होंने *याचिकाकर्ता को लगभग 40 साल पहले* गलती *से* दिया था – सेवानिवृत्ति *लाभों में कमी – निर्णय लेने से पहले कोई* भी नोटिस *जारी* नहीं किया गया – *भर्ती के समय, याचिकाकर्ता द्वारा न तो किसी भी जानकारी को* रोका *गया और न ही कोई* गलतबयानी दी *गई - याचिकाकर्ता को अधिक भुगतान की गई राशि की वसूली के लिए उत्तरदाताओं* के द्वारा की गयी *कार्रवाई* अनुचित *है और* अनुच्छेद *14 का उल्लंघन* करती *है– याचिका* मंज़ूर *है*।

धारित, उत्तरदाता ने 23 दिसंबर, 2002 को बिना किसी सुचना, याचिकाकर्ता के वेतन को, एकतरफा आदेश द्वारा निरस्त कर दिया था| 19 जनवरी, 1963 से 30 अप्रैल, 1963 तक की अवधि को छोड़कर, याचिकाकर्ता का वेतन फिर से तय किया गया था/ उन्हें केवल यह सूचित किया गया था कि, उनके वेतन को फिर से तय किया गया है और उसके बाद 29,900 की राशि, उनसे प्राप्त करने योग्य है। आदेश के अंत में, दिनांक 31 मार्च, 2003 को उनसे पूछा गया कि, क्या वह इस संबंध में कुछ कहना चाहते हैं। पूर्वोक्त आदेश को मुश्किल से शो कॉज नोटिस कहा जा सकता है| फिर भी याचिकाकर्ता ने 16 अप्रैल 2003 को जवाब दिया| इसके बावजूद उत्तरदाता ने वसूली के आदेश को एल.आर. और वित्त विभाग की सलाह के आधार पर ही दिया था| यह तथ्य 13 जनवरी 2004 के आदेश से स्पष्ट है| उत्तरदाता द्वारा लिया गया आदेश स्पष्ट रूप से नागरिक परिणाम का कारण है| इस तरह के आदेश प्राकृतिक न्याय के नियमों का पालन किए बिना उत्तीर्ण नहीं किये जा सकते है|

(पैरा 6 और 7)

आगे अभिनिर्धारित, उत्तरदाता की पूरी कार्यवाही मनमानी, प्राकृतिक न्याय के नियमों के खिलाफ, अततः भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 के विपरीत है| 28 अक्टूबर, 1971 को याचिकाकर्ता ने प्रतिवादी-विभाग को शामिल किया था| हमें यह स्वीकार करना थोड़ा मुश्किल लगा कि,

(एस. एस. निज्जर, जे)

लगभग 40 वर्षों से गलत निर्धारित वेतन के विषय में पता न चला। हम इस बात से सहमत हैं की याचिकाकर्ता को किसी भी गलतबयानी के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता, जिसके परिणामस्वरूप उत्तरदाता ने गलत वेतन का निर्धारित किया। अब याचिकाकर्ता सेवानिवृत्त हो चुका है। अततः, उत्तरदाता को याचिककर्ता से अधिक दी हुई राशि की वसूली की अनुमति देना पूरी तरह से अनुचित होगा।

(पैरा 9)

राम प्रसाद, एडवोकेट. याचिकाकर्ता के लिए।

अनिल राथे, ए.जी. हरियाणा. प्रतिवादी के लिए।

निर्णय

एस.एस. निजार, जे. (मौखिक),

(1) दोनों पार्टियों के वकीलों की सहमति से, आज रिट याचिका को अंतिम निपटान के लिए लिया जाता है।

(2) 19 जनवरी, 1963 से 5 नवंबर, 1967 में आपातकाल के दौरान, याचिकाकर्ता ने सेना में सेवा की थी। इसके बाद, 12 मार्च, 1969 को, वह ज़िला सैनिक बोर्ड में शामिल हो गए थे, जहाँ उन्होंने 26 अक्टूबर, 1971 तक काम किया था। 28 अक्टूबर, 1971 को उन्होंने जूनियर लेखा परीक्षक के रूप में, निर्देशक, महिला और बाल विकास कार्यालय, चंडीगढ़ में काम किया था। (बाद में प्रतिवादी सं. 2). *Vide* 12 मई, 1986 के आदेश से, याचिकाकर्ता को 19 जनवरी, 1963 से 5 नवंबर, 1967 तक, वेतन के निर्धारित होने तक, सैन्य सेवा के लाभ इस्तेमाल करने की अनुमति दी गई थी। आदेश की एक प्रति याचिका में अनुलग्नक पी 1 के रूप में संलग्न है। याचिकाकर्ता 30 अप्रैल, 2003 को सेवानिवृत्त हुआ। हालांकि, उनकी सेवानिवृत्ति की तारीख से पहले, 23 दिसंबर, 2002 को याचिकाकर्ता के वेतन को फिर से तय किया गया, जिसमें 19 जनवरी, 1963 से 30 अप्रैल, 1963 की अवधि को बाहर रखा गया। इस अवधि के दौरान की गई सेवा को "लड़का" सर्विस माना गया था। इसलिए, लड़का सर्विस के लाभ को वापस लेकर, सैन्य सेवा के आधार पर 23 अप्रैल, 1967 को ही याचिकाकर्ता की सरकारी सेवा में शामिल होने की तारीख माना गया। याचिकाकर्ता ने 23 दिसंबर, 2002 के आदेश के खिलाफ एक प्रतिनिधित्व भेजा था। 31 मार्च, 2003 को, प्रतिवादी ने फिर से याचिकाकर्ता को एक "आदेश" भेज था, जो यह सूचित करता है कि, वेतन के शोधन के परिणामस्वरूप, 22,900 की राशि, उससे वसूली योग्य है। उसे कार्यालय में

यह राशि जमा करने का आदेश दिया गया था, अन्यथा दिए गए लाभों से कटौती की जाएगी। पत्र के अंत में यह इस प्रकार कहा गया था: –

"यदि आप इस संबंध में कुछ कहना चाहते हैं, तो आप 15 दिनों के भीतर अपना प्रतिनिधित्व जमा कर सकते है,अन्यथा यह माना जाएगा कि आपके पास,अपने बचाव में कहने के लिए कुछ भी नहीं है।"

(3) याचिकाकर्ता ने शो-काज़ नोटिस का जवाब प्रस्तुत किया. उन्होंने कहा कि, अपनी सेवानिवृत्ति से लगभग 3 से 4 महीने पहले, उसे मौखिक रूप से सूचित किया गया था कि, विभाग ने उसे शुरू से ही एक अतिरिक्त वृद्धि की अनुमति दी हुई थी। उसके बाद 23 दिसंबर, 2002, को आदेश द्वारा, उसकी एक वृद्धि कम कर के, उसके वेतन को अवैध रूप से फिर से तय किया गया था। उसने यह भी निवेदन किया था कि, उसने विभाग को किसी भी तरह की गलतबयानी नहीं दी है। उसने कहा कि विभाग को प्रतिकूल आदेश देने से पूर्व, उसे लिखित रूप में सूचित करना चाहिए था। ऐसा न करके, विभाग ने उसके साथ घोर अन्याय किया है और वह असहनीय था। उसने आगे कहा कि उसे व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर दिया जा सकता था। याचिकाकर्ता के अनुरोध के आधार पर 29 अगस्त, 2003 को उसे व्यक्तिगत सुनवाई की अनुमति दी गई। याचिकाकर्ता के अनुरोध पर, उसका मामला सलाह के लिए, वित्त विभाग को भेजा गया। 13 जनवरी, 2004 के आदेश द्वारा, (अनुलग्नक पी -6), उत्तरदाता ने याचिकाकर्ता के स्पष्टीकरण को अस्वीकार किया। 22,900 की राशि को, सेवानिवृत्ति लाभों से रोक दिया गया।

(4) प्रस्ताव जारी होने की सूचना पर, उत्तरदाता ने लिखित बयान दर्ज किया। उन्होंने निवेदन किया है कि, 19 जनवरी, 1963 से 30 अप्रैल, 1963 तक की अवधि को सैन्य सेवा के लाभों से बाहर रखा गया है, क्योंकि उस समय याचिकाकर्ता 18 वर्ष की आयु को प्राप्त नहीं हुआ था।

(5) याचिकाकर्ता के वकील ने कहा कि, उसे सुना नहीं गया, क्योंकि उत्तरदाता को फैसले से पहले, सैन्य की अवधि को फिर से तय करने के बारे में एक शो कॉज़ नोटिस जारी करना चाहिए था। उन्होंने आगे कहा कि चूंकि याचिकाकर्ता ने भर्ती के समय उत्तरदाता से कोई भी जानकारी नहीं छुपाई थी, तो अब सेवानिवृत्त के समय, उन्हे उसे सेवा के लाभ वापस नहीं लेने चाहिए। इसके समर्थन में, वकील

माननीय सुप्रीम कोर्ट के फैसले साहब राम *बनाम* हरियाणा राज्य (1). श्री. राथे, को प्रस्तुत करता है, परंतु पूर्वोक्त निर्णय, तथ्यों और परिस्थितियों पर लागू नहीं होता, क्योंकि उत्तरदाता ने केवल उस अवधि की फिर से गणना की, जिसमें याचिकाकर्ता को सैन्य सेवा के लाभ प्राप्त होने चाहिए थे। इसके अलावा, याचिकाकर्ता से किसी भी वसूली से पहले, आवश्यक शो-कॉज़ नोटिस जारी किया गया था।

(6) हम यह मानते है की उत्तरदाता ने निष्पक्ष रूप से काम नहीं किया है। उत्तरदाता के लिए आवश्यक था की वह निर्णय से पहले याचिकाकर्ता को शो-कॉज़ नोटिस भेजे, जिसके परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता के सेवानिवृत्त लाभों में कमी आएगी। ऊपर वर्णित तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि प्रतिवादी ने 23 दिसंबर, 2002 को एकतरफा, बिना किसी शो कॉज़ नोटिस, आदेश द्वारा याचिकाकर्ता के वेतन को फिर से तय किया था। 19 जनवरी, 1963 से 30 अप्रैल, 1963, की अवधि को छोड़कर, वेतन फिर से तय किया गया। उसे केवल यह बताया गया कि, वेतन फिर से तय करने के बाद 29,900 की राशि उससे वसूली योग्य है। आदेश के अंत में, दिनांक 31 मार्च, 2003 को उनसे पूछा गया कि, क्या वह इस संबंध में कुछ कहना चाहते हैं। पूर्वोक्त आदेश को मुश्किल से शो कॉज नोटिस कहा जा सकता है| फिर भी याचिकाकर्ता ने 16 अप्रैल 2003 को जवाब दिया| इसके बावजूद उत्तरदाता ने वसूली के आदेश को एल.आर. और वित्त विभाग की सलाह के आधार पर ही दिया था। यह तथ्य 13 जनवरी 2004 के आदेश से स्पष्ट है| (अनुलग्नक पी -6).

(7) आदेश (अनुलग्नक पी -3, पी -4 और पी -6) स्पष्ट रूप से नागरिक परिणाम का कारण बनते हैं । इस तरह के आदेश प्राकृतिक न्याय के नियमों का पालन किए बिना उत्तीर्ण नहीं किये जा सकते है| सर्वोच्च न्यायालय का फैसला एस . एल. कपूर *बनाम* जगत और अन्य, (2) हमारे इस दृष्टिकोण का समर्थन करता है। पूर्वोक्त मामले में, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि, "प्राकृतिक न्याय की आवश्यकताएं तभी पूरी होंगी, जब मद्देनजर प्रतिनिधित्व करने का अवसर दिया जाएगा। प्राकृतिक न्याय की माँगें केवल व्यक्ति की जानकारी के आधार पर ली गई कार्यवाही से नहीं होगी, जो आकस्मिक तरीके से या किसी अन्य उद्देश्य से प्राप्त हुई है।" इससे आगे देखा गया कि "नागरिक परिणाम" शब्द

(1) 1995(2) R.S.J. 139

(2) AIR 1981 S.C.136

निस्संदेह केवल संपत्ति या व्यक्तिगत अधिकारों का उल्लंघन नहीं है, लेकिन नागरिक स्वतंत्रता, भौतिक अभाव और कोई आर्थिक क्षति, सामग्री की कमी और गैर-आर्थिक क्षति भी है। इसके व्यापक में दीक्षांत समारोह, वह सब कुछ जो नागरिक जीवन में एक नागरिक को प्रभावित करता है नागरिक परिणाम है।" सर्वोच्च न्यायालय ने भी निम्नानुसार देखा है कि: –

"24. हमारे विचार में प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत किसी बहिष्करण को नहीं जानते हैं, जो इस बात पर निर्भर है कि क्या होता अगर प्राकृतिक न्याय माना गया होता। प्राकृतिक न्याय का गैर-पालन स्वयं किसी भी व्यक्ति के प्रति पूर्वाग्रह है और स्वतंत्र रूप से पूर्वाग्रह का प्रमाण या प्राकृतिक न्याय से इनकार का प्रमाण अनावश्यक है। यह उस व्यक्ति के प्रति पूर्वाग्रह है और स्वतंत्र रूप से पूर्वाग्रह का प्रमाण या प्राकृतिक न्याय से इनकार का प्रमाण अनावश्यक है। यह उस व्यक्ति से आएगा जिसे न्याय से इनकार किया गया कि, उस व्यक्ति को कोई हानि नहीं हुई है। जैसा कि हमने पहले कहा था जहां भर्ती या निर्विवाद तथ्यों पर केवल एक निष्कर्ष संभव है और कानून के तहत केवल एक दंड अनुमेय है, तब अदालत रिट को प्राकृतिक न्याय की पालना के लिए मजबूर नहीं कर सकती, इसलिए नहीं कि प्राकृतिक न्याय का पालन करना आवश्यक नहीं है,लेकिन इसलिए की न्यायालय निरर्थक रिट जारी नहीं करती। हम दिल्ली उच्च न्यायालय के विपरीत दृष्टिकोण निर्णय से सहमत नहीं हैं,जो कि अपील में है।"

(8) यह दृश्य बाद में वीरेंद्र चावला *बनाम* चंडीगढ़ प्रशासन और अन्य (3) में डिवीजन बेंच द्वारा लिया गया था। हम भी अपने विचार में दृढ़ हैं जो कि सर्वोच्च न्यायालय ने साहब राम *(Supra).* पूर्वोक्त मामले में लिया था, सर्वोच्च न्यायालय ने इस प्रकार देखा है कि: –

"निश्चित रूप से, अपीलकर्ता के पास आवश्यक शैक्षिक योग्यता नहीं है। इन परिस्थितियों में, अपीलकर्ता छूट का हकदार नहीं होगा। प्रधानाचार्य उसे छूट देने में असमर्थ रहा। अपीलकर्ता को छूट देने की तारीख से, उसे फिर से तय की गई राशि वेतन में दी गई थी। हालांकि, यह अपीलकर्ता द्वारा गलत बयानी की वजह से उसे उच्च वेतन-स्तर का लाभ नहीं मिल, लेकिन प्रिंसिपल के गलत निर्माण की वजह से हुआ है। इन परिस्थितियों में, आज तक भुगतान की गई राशि को वसूल नहीं किया जा सकता है।

(3) S.L.R 1984(1) P&H 452

(सूर्या कान्त जे।)

समान काम के लिए समान वेतन का सिद्धांत, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा निर्धारित तराजू पर लागू नहीं होता है। अपील को बिना किसी लगान के आदेश से, मंजूर की जाती है।"

(9) कानून के मद्देनजर, इसमें कोई संकोच नहीं है कि, उत्तरदाताओं की पूरी कार्यवाही मनमानी, प्राकृतिक न्याय के नियमों के विरुद्ध , और इसलिए, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 के विपरीत है। 28 अक्टूबर, 1971 को याचिकाकर्ता ने प्रतिवादी-विभाग को शामिल किया था| हमें यह स्वीकार करना थोड़ा मुश्किल लगा कि, लगभग 40 वर्षों से गलत निर्धारित वेतन के विषय में पता न चला। हम इस बात से सहमत हैं की याचिकाकर्ता को किसी भी गलतबयानी के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता, जिसके परिणामस्वरूप उत्तरदाता ने गलत वेतन का निर्धारित किया। अब याचिकाकर्ता सेवानिवृत्त हो चुका है। अततः, उत्तरदाता को याचिककर्ता से अधिक दी हुई राशि की वसूली की अनुमति देना पूरी तरह से अनुचित होगा। हमारी राय में, यह मामला सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियों में दर्शाया गया है जो कि साहब राम में प्राप्त है (S*upra*).

(10) नतीजतन, रिट याचिका को अनुमति दी गई है। आदेश (अनुलग्नक पी -3, पी -4 और पी -6) को समाप्त कर दिया जाता है. बिना लगान।

आर.एन.आर.

मेहताब एस. गिल और सूर्या कांत, जे.जे. के समक्ष

कुलविंदर सिंह - अपील कर्ता

बनाम

पंजाब का राज्य, – *उत्तरदाता*

Crl. अपील नं. 2005 के 110-डीबी ऑफ 2005 &
मर्डर संदर्भ 2 ऑफ 2005

5 जुलाई, 2005

भारतीय दंड संहिता, 1860 – धारा *302* –अभियुक्त द्वारा *अपने ही नाना-नानी और* ममेरी *बहन* की *भीषण हत्या* का*आरोप* , *सबसे क्रूर, ठंडा-खून और* बार्बेरिक है जो कि बिना किसी *उकसाव* के – *आरोपी का* मकसद *अपनी ही* ममेरी *बहन का बलात्कार* करना –*अभियुक्त* द्वारा एक *पवित्र* संबंध को *नष्ट करना, धोखा देना और सामाजिक मूल्यों को ख़राब करना – मौत की सजा – केवल ऐसे मामलों में जहां अपराध के बारे में कुछ असामान्य है जिसके लिए कारावास जीवन अपर्याप्त वाक्य होगा – दो निहत्थे की हत्या असहाय / असहाय महिलाएं – हत्या करने वाले अभियुक्तों का अधिनियम*।

अस्वीकरण - स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उदेश्य के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उदेश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।

नीतिका बांसल

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

(*Trainee Judicial Officer*)

करनाल, हरियाणा